International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 5.401 Volume 6, Issue 5, May 2019
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

मध्यकालीन भारत मे भक्ति आन्दोलन का राजनीतिक दृष्टिकोण।

डा. अनिता जून
एसोसिएट प्रोफसर (इतिहास)
राजकीय महिला महाविद्यालय, करनाल

मध्य युग में बहुत ही अशान्त वातावरण था। मुसलमानों का शासन स्थापित हो गया था, जिससे राजनीति क्षेत्र में काफी उथल-पुथल थी। पूर्वमध्य काल में बलबन तथा अलाउद्दीन की युद्धकला का साक्षी इतिहास है। मुहम्मद-बिन-तुग़लक एवं इब्राहीम शाहशर्की साहित्य और कलाप्रेमी थे।

डॉ0 ईश्वरी प्रसाद ने लिखा है - "यह सत्य है कि इन शासकों ने हिंदुओं पर अत्याचार किये, उनके धर्म का तिरस्कार किया औरर उनका पूर्ण रीति से दमन किया, मुसलमान लेखकों ने स्वयं इसका सविस्तार वर्णन किया है। उन्होंने अन्याय एवं अनीति को छिपाने का बहुत कम प्रयत्न किया है।" पर राजनीति की दृष्टि से मुसलमानों को असभ्य नहीं कहा जा सकता और न वे शासन-सिद्धान्तों से अपरिचित थे। इन शासकों की धार्मिक प्रभाव से दूर जनकल्याण की नीति भी असफल हुई, क्योंकि यह युग ऐसे आदर्शों ने अनुकल न था। इस आदर्श को पूर्ण करने का भार मुग़लों पर पड़ाा पर वे भी इसमें पूर्ण सफल नहीं हुए।

डॉ0 ईश्वरी प्रसाद ने मुग़लों के शासनतन्त्र के बारे में लिखा है - "मुगलों ने पूर्वकालीन अनियमित शासनतन्त्र को नियमित किया अपने विशाल साम्राज्य पर नियन्त्रण रखने के लिए नये-नये विधानों और संस्थाओं को जन्म दिया और इस प्रकार एक ऐसे शासनतन्त्र की स्थापना की, जो पहले से बहुत विकसित थाा और जो अपने ही गुणों से गौरवान्वित था।

तत्युगीन राजनीति व्यवस्था वस्तुतः अपने पूर्वागामी शासकों की राजनीति का ही विकसित रूप थी डॉ0 ई६वरी प्रसार की मान्यता द्रष्टव्य है - "मुगलशासक अपने भारतीय शासको के बहुत ऋणी हैं। जिन्होनें उनके शक्तिशाली एवं विशाल साम्राज्य की नींव तैयार की थी और

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

जिनकी स्थापित की हुई प्रथाओं को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव उनकी शासन प्रणाली एवं राजनीतिक संस्थाओं पर पड़ा है"।

भक्ति आन्देलन युगीन संत एवं साहित्यकार राजनीति से सीधे संबंधित नहीं थो। उनके साहित्य में यत्र-तत्र तत्युगीन राजनीतिक अव्यवस्थओं में चित्र फिर भी बहुत हैं। वे मुसलमान और मुग़ल शासकों की शासन व्यवस्था से भिन्न थे और कलियुग वर्णन के माध्यम से उन्होंने इस सन्दर्भ में अपनी खीज प्रस्तुत की है । सूरदास ने 'सूरसागर' के प्रथम स्कंध में कलियुग की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि कलियुग में लो हरि विमुख होंगे, वेश्याएँ वहाँ निवास करेंगी लोग मदिरा-पान करेंगे, शिकारी शिकारवृति में लन रहेंगे तथा जुआरी जुआ खेलने में मस्त रहेंगे। तुलसीदास ने अपने रामचरितमानस में कलियुग का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह इस प्रकार है - काव्य भुसुण्डि गरूड़ से कहते हैं कि पूर्व के एक कल्प में पापों का मूल-युग कलियुग था जिससे पुराण और स्त्री सभी अधर्म परायण और वेदों के विरोधी थे। कलियुग के पापों ने सब धर्मो को ग्रस लिया, सथग्रंथ लुप्त हो गये। दम्मियों ने अपनी बुद्धि से कल्पना करके बहुत से पंथ प्रकट कर लिये कलियुग में अनुष्य रोगों से पीड़ित है, सुख कहीं नहीं हैं। लोग बिना किसी कारण अभिमान और विरोध करते हैं, कलियकाल ने मनुष्य को बेहाल कर डाला है। इस प्रकार तुलसी ने कलियुग का वर्णन करके अत्युगीन राजनीतिक अव्यवसथा के अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं। मुस्लिम युग को उन्होंने कलियुग से उपमित किया है। तुलसीदास ने राजनीति के सिद्धांतों का निरूपण अधिकतर मानस में ही किया है। "पहले तो उन्होंने समकालीन परिस्थितयों का चित्रण कर कलियुग प्रभाव से - राजनीति की दुर्व्यवस्था का रूप खड़ा किया है। बाद में राम-राज्य वर्णन में राजनीति के आदर्श की आरे संकेत किया है। तत्कालीन राजनीति चित्र तुलसी की दोहावली, कवितावली, विनय-पत्रिका में भी कहीं-कहीं हैं।"

तुलसी ने अनेक स्थलो पर राजनीतिक आदर्शो का निरूपण किया है। साथ ही एक अच्छे राजा के गुणों का भी उल्लेख किया है। डॉ0 रामकुमार वर्मा ने उन गुणों का उल्लेख करते हुए लिखा है - "राजा को प्रजा का निष्पक्ष पालन और दुष्टों का नाश करना चाहिए। उसे सत्यव्रती, निर्भीक, पराक्रमी और स्वदेशप्रेमी होना चाहिए"।

तुलसी दास की रामायण में राम राज्य की कल्पना अप्रतिम है, रामराज्य में सब लोग वर्णाश्रम धर्म का पालन करते हुए वेद हैं। मार्ग का अनुसरण करते हैं, उन्हें भय, शोक, रोग आदि नहीं सताते। यहाँ वैदिक, दैविक, भौतिक ताप से कोई प्रपीड़ित नहीं होता। सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं। तुलसी ने चेतन प्रकृति को ही नहीं, जड़ प्रकृति को भी सुगन्ध पवन का चलना, धरती का खेतों से भरा रहना, नदियों का श्रेष्ठ शीतल जल से आपूरित होना, सागर का मर्यादित रहना, तालाबों का कमलों से परिपूर्ण होना आदि ऐसे ही चित्र हैं। एक और कलि वर्णन, दूसरी ओर राम-राज्य की परिकल्पना दोनों ही तुलसी के गहन चिन्तन के परिचायक हैं, इस चिन्तन का आधार कवि की भक्ति एवं सात्विक मनोवृत्ति है, रामत्व की रावणत्व पर पर विजय की जो कल्पना तुलसी ने की है, उसके मूल में तत्कालीन भारत की राजनीतिक दुराव्यस्था ही थी, जिससे दुखित होकर उन्होंने इस ओर संकेत किया, यवन राज्यान्तर्गत होते हुए भी राम-राज्य का जो आदर्श तुलसी ने उपस्थित किया था, वह भारत का आज ीाी गौरवपूर्ण स्वप्न बना हुआ है, वह राम-राज्य सभी राज्यों में श्रेष्ठतम और सुख सौभाग्यपूर्ण है।

भक्ति आन्दोलन युगीन संतो ने राजनीति पर स्वतन्त्र मंथ नहीं रचे। वे ऐस ग्रन्थों की रचना कर भी नहीं सकते थे, क्योंकि वे मूलत: कवि थे। डॉ0 रामकुमार वर्मा ने 1905 ई0 की खोज रिपोर्ट के आधार पर नन्ददास द्वारा लिखी एक पथबद्ध राजनीति की पुस्तक 'राजनीति हितोपदेश' का उल्लेख आवश्यक किया, पर वह उपलब्ध होनी कठिन है। इसकी पद संख्या 3650 है। सिक्ख संत राजनीति की आर अधिक सक्रिय थे। किन्तु उनके अन्दर सामरिकता क्यों आ गई, इसका दायित्व तत्कालीन शासकों की धर्मान्ध नीति और तानाशाही मिजाज़ पर है।

पंजाब बार-बार विदेशियों का गढ़ बन चुका था। इसकी रक्षा और पुन: स्थापना का श्रेय सिक्खों को ही जाता है। डॉ0 मजीठिया ने लिखा है - "यह भारतीय संस्कृति का इस प्रेदश में पुनरूत्थान था। भारत का यह भू-भाग अन्त समय तक स्वतन्त्र रहा"।

भक्ति आन्दोलन युगान सता ने राजनीति पर स्वतन्त्र ग्रंथ नहीं रचे। वे ऐसे ग्रन्थों को रचना कर भी नहीं सकते थे, क्योंकि वे मूलत: कवि थे। डॉ0 रामकुमार वर्मा ने 1915 ई0 की खोज रिपोर्ट के आधार पर नन्ददास द्वारा लिखी एक पथबद्ध राजनीति की पुस्तक 'राजनीति

हितोपदेश' का उल्लेख आवश्यक किया है, पर वह उपलब्ध होनी कठिन है। इसकी पद संख्या 3650 है। सिक्ख संत राजनीति की ओर अधिक सक्रिय थे। इसका कारण तत्कालीन शासकों की धर्मान्ध नीति थी, राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है - "सिक्खों का सम्प्रदाय शांत विनम्र एवं भावुक भक्तों का सम्प्रदाय था। किन्तु उनके अन्दर सामारिकता क्यों आ गई" इसका दायित्व तत्कालीन शासकों की धर्मान्ध नीति और तानाशाही मिजाज़ पर है।

पंजाब बार-बार विदेशियों द्वारा रौंदा जाता रहा, एक तरह से वह विदेशियों का गढ़ बन चुका था। इसकी रक्षा और पुनः स्थापना का श्रेय सिक्खों को ही जाता है। डॉ0 मजीठिया ने लिखा है - "यह भारतीय संस्कृति का इस प्रदेश में पुनरुत्थान था। भारत का यह भू-भाग अंत समय तक स्वतंन्त्र रहा"।सिक्ख गुरू अर्जुनदेव के साथ बादशाह जहाँगीर ने जो अत्याचार किये थे, उसे सिक्ख लोग भूल नहीं सकते थे, राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है -"उन्होंने देखा कि केवल जाप और माला से ही धर्म की रक्षा नहीं की जा सकती, यदि धर्म को बचाना है तो उसक लिए तलवार भी धारण की जानी चाहिए और उसके पीछे राज्यबल भी होना चाहिए"। इसलिए गुरू गोविन्द सिंह ने संतों का परिधान फाड़कर गुरूद्वारे में डाली और शरीर पर राजा और योद्धा का परिधान धारण कर लिया। यहीं से सिक्खों से मुग़ल तीन लड़ाइयों में भिड़े। पहली लड़ाई सन् 1628 ई0 में हुई, दूसरी सन् 1630 ई0 में और तीसरी सन्..... ..... ई0 में इन तीनो लड़ाइयों में जीत सिक्खों की हुई गुरू गोविन्द सिंह द्वारा चलाई हुई परम्परा में सिक्ख दो वर्गो में विभाजित हो गये - एक वीर और सिपाही वाला, दूसरा संत और भक्तों वाला, किन्तु गुरू गोविन्द सिंह ने संत और भक्त के गौण, शूर और वीर को प्रमुख बना दिया। असल में वे परशुराम के अवतार थे और संकट के समय मनुष्यों को यही शिक्षा देने आये थे कि जीवन से संघर्ष में विजय पाने के लिए केवल शास्त्र ही नहीं, शास्त्र की भी आवश्यकता होती है।

ठस प्रकार हम देखते हैं कि राजनीति के क्षेत्र में मध्य युग में कुछ परिवर्तन हुए जिमें प्रमुख हैं।

1. मुगलों के पहले की अपेक्षा अधिक विकसित शासन-तंत्र की स्थापना की।
2. मध्य युगीन संतों एवं कवियों में तुलसी ही एक ऐसे कवि है जिन्होंने तत्युगीन की राजनीति पर अपने चिन्तन से सर्वाधिक प्रकाश डाला।

3. रामत्व की रावणत्व पर विजय तुलसी की राजनीति चेतना को भी व्यंजित करती है।

4. तत्युगीन सिक्ख अन्य संतों की अपेक्षा राजनीति में अधिक सक्रिय थे। उन्होंने शास्त्र की अपेक्षा शस्त्र को महत्त दी।

इस तरह मध्यकालीन राजनीति पर कवियों का प्रभाव जो पड़ा विशेष उल्लेखनीय नहीं कहा जा सकता।

सन्दर्भ-सूची

1. डॉ0 ईश्वरी प्रसाद, मध्यकालीन भारत, संस्करण 1955 ई0, इलाहाबाद, पृष्ठ 565 ।
2. वही, वृष्ठ 565 ।
3. डॉ0 ईश्वरी प्रसाद, मध्यकालीन भारत, संस्करण 1955ए इलाबाद, पृष्ठ 595 ।
4. वही, पृष्ठ 516 ।
5. सूरदास, सूरसागर, प्रथम स्कन्ध, संस्करण : संवत् 1991 शके 1856, बम्बई, पृष्ठ 33 ।
6. तुलसीदास, रामचरितमानस, उत्तरकांड, संवत् 2035, अट्ठाइसवाँ संस्करण, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 1125, दोहा 96 ख ।
7. वही, दोहा 97 क, पृष्ठ 1126 ।
8. वही चौपाई, 101, पृष्ठ 1731 ।
9. डॉ0 राजकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, द्वितीय संस्करण, 1948 ई0, प्रयाग, पृष्ठ 623 ।
10. तुलसीदास, तुलसी ग्रंथावली, दूसरा खंड, विनय पत्रिका, छंद 139, पृष्ठ 533 ।
11. डॉ0 रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, द्वितीय संस्करण, 1948 ई0, प्रयाग, पृष्ठ 628 ।
12. तुलसीदास, रामचरितमानस, उत्तरकांड, दोहा संख्या 20, पुष्ठ 1045 ।
13. वही, चौपाई 21, (प्रथम दो पंक्तियाँ), पृष्ठ 1045 ।
14. वही पृष्ठ 1047-1048 ।
15. डॉ0 रामकुमार वर्मा, हिंदी साहित्य को आलोचनात्मक इतिहास, द्वितीय संस्करण : 1948 ई0, प्रयाग, पृष्ठ 787 ।

16. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, तृतीय संस्करण: 1962 ई0, पटना, पृष्ठ 400 ।

17. डॉ0 सुदर्शन सिंह मजीठिया, संत साहित्य, प्रथम संस्करण : 1962 ई0 दिल्ली पृष्ठ 365 ।

18. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, तृतीय संस्करण : 1962 ई0, पटना, पृष्ठ 400 ।